भगवत् कृपा

THE DIVINE GRACE

महाप्रभु स्वामिनारायण प्रणीत सनातन, सचेतन और सक्रिय गुणातीतज्ञान का अनुशीलन करने वाली मासिक सत्संगपत्रिका

वर्ष-10-, अंक-1	सम्पादक : साधु मुकुंदजीवनदास गुरु ज्ञानजीवनदासजी	वार्षिक चन्दा-10.00
रविवार, 25 जन.' 87	मानद सहसम्पादक: डॉ. महेन्द्र दवे	प्रति अंक : 1.00

23 अगस्त की सुबह बम्बई, पंजाब व दिल्ली के हरिभक्तों ने मिलकर अपने प्राण प्रियतम प्रभुस्वरूप प.पू. काकजी महाराज की अस्थियों को दुःखी परन्तु दृढ़ हृदय से भागीरथी-गंगा में प्रवाहित करके विदाई ली.....हरिद्वार में पूर्ण हुए इस आखिरी विदाई के प्रसंग पर वह करुण दृश्य देखकर सभी फूट-फूटकर रो पड़े, पर पू. कांतिकाका की सेरे छाया में मन ही मन दृढ प्रतिज्ञ हुए कि अब तो मन की मान्यताओं, हल्की वृत्तियों को यहाँ गंगा में ही विसर्जित करना है....प.पू. काकाजी जैसी दिव्य विभूति के स्थूल शरीर दर्शन, सेवा, समागम को हमने खो दिया, पर दिव्यस्वरूप में हर पल प्रगट प.पू. काकाजी को अब उनके ही ढंग से जीकर अपने आपको होम करके खो जाना है। प.पू. स्वामिश्री सत्यमित्रानन्द स्वामी महाराज द्वारा निर्मित भारतमाता मंदिर के साथ बने 'समन्वय कुटीर' के व्यवस्थापक श्री न्यायमित्र शर्मा जी व सभी कार्यकर्ताओं ने वहाँ सब प्रकार से खूब सहयोग दिया उसके लिये उनका दिल से धन्यवाद.....

अलविदा....कांतिकाका

और....27 नवम्बर 1986 गुरुवार की रात्रि 10.30 बजे गुणातीत समाज के सूत्रधार और ब्र.स्व.प.पू काकाजी के शब्दों में पंजाब सत्संग के सेनापति कहे जाने वाले पू. कांतिकाका अचानक हम सभी से विदाई लेकर अक्षरधाम में बैठ गये.....अपने प्राणप्रिय प.पू. काकाजी के पास चले गए ! प.पू. पप्पाजी व सोनाबा की उपस्थिति में उन्होंने प्रशांत अंतिम विदाई ली। हम तो अभी 7 मार्च 1986 के घाव के दर्द को धुँधला भी ना कर पाये थे कि यह दूसरा असहनीय घाव दिल पर पड़ा। सभी यह सोचने मजबूर हुए कि प्रभु क्यों ऐस कर रहे हैं? अब हमें उदास देखकर हँसाने के लिये कौन पूछेगा-'क्यों थोबड़ा लटका रखा है? उदासीन बाबा के लड़के हो?' अब शूरवीरता, हिम्मत की

बातें करके हमें दिलासा कौन देगा? कौन समझायेगा कि तीव्र भजन का उपाय लेकर प.पू. काकाजी को अपने अन्दर प्रगट कर लो....प.पू. काकाजी कहीं गये नहीं है, परन्तु मूक रहकर स्वीकार करने के अलावा और कोई रास्ता भी तो नहीं था।

दिल्ली से संतमंडल तो 26 नवम्बर की रात से ही गुजरात में होने वाली उभराट शिविर निमित्त गुजरात पहुंच गया था। समाचार पहले गुजरात पहुँचा तो संतों प.पू. हरिप्रसादस्वामीजी के साथ वहाँ से ही अक्षरधाम के इस अनादि के सेवक का अंतिम दर्शन करने के लिए निकल गये। तीर्थभूमि ताड़देव में संतों, युवकों, बहनों ने अपने 'प्यारे दादा' का आँखों में आँसूं लिये पूजन किया। प.पू. पप्पाजी, प.पू. हरिप्रसादस्वामीजी, प.पू. अक्षरविहारीस्वामिजी, प.पू. साहेब आदि के सान्निध्य में शाम को 7-00 बजे बम्बई में अपने मन्दिर बनाने की जगह पवई में उनका अग्नि-संस्कार विधि किया व सबने नतमस्तक होकर उनकी ही तरह निष्ठावान, शूरवीर सेवक बनने का मन ही मन दृढ़ संकल्प किया।

बम्बई फोन द्वारा रात को करीब 2-00 बजे यह दुःखद समाचार दिल्ली अशोकविहार मन्दिर पहुँचा। सब दुबारा 7 मार्च के धक्के की तरह सन्न रह गये। परन्तु फिर भी दिल में दर्द झेलते हुए, आँखों में आंसू लिए रात को 2-30 बजे से ही दिल्ली व पंजाब के हरिभक्तों को फोन व टेलीग्राम द्वारा यह खबर दे दी। प.भ. पटेल साहब, प.भ. दालिया साहब आदि पू. कांतिकाका के अंतिम दर्शन के लिए प्लेन से बम्बई जाने निकल गए। पू. कांतिकाका सभी के आत्मीय स्वजन थे। सभी के निजी थे। प.पू. काकाजी की अन्तर की प्रसन्नता पा लेने की टेक्नीक बताने वाले पुल थे। प्रभु के प्रगट स्वरूपों को चाहने वाले तो बहुत होते हैं परन्तु प्रभु के स्वरूप स्वयं जिसकी चाहें ऐसे तो एक पू. कांतिकाका थे। दिल्ली, पंजाब वह अक्सर आया जाया करते थे। उनकी शूरवीरता व हिम्मत भरी सौम्यवाणी के कारण हरिभक्तों ने भी उन्हें **पंजाब के सेनापति** के रूप में स्वीकार थे। वास्तविकता तो यह है कि शब्दों का बंधन रखकर पू. कांतिकाका को श्रद्धांजलि देना जड़ता है, जबकि उनके जीवन की सैकण्ड-सैकण्ड की गुरुभक्ति, दृढ़ निष्ठा, निष्काम सेवा, स्वामी सेवकभाव की रीति, निर्दोषबुद्धि, शूरवीरता के अनुपम गुणों को निहार कर जीवन जीने के लिए उद्यम करना वह ही है भावभरी सार्थक सच्ची श्रद्धाँजलि.....

पू. कांतिकाका को पिछले छः सात साल से डायबीटीज की तकलीफ तो थी, पर तन, मन, धन का हर दर्द सहज झेलने की असाधारण शक्ति उनमें थी। बेशक, बाहरी व आन्तरिक विपरीत परिस्थितियों में भगवान का ही दृढ़ आसरा लेकर लड़ने की अनोखी शूरवीरता का आदर्श उन्होंने सारे गुणातीत समाज के लिए रख तो दिया, परन्तु ब्र.स्व.शास्त्रीजी महाराज व गुरुहरि योगीजी महाराज द्वारा भेंट में दिये अपने भाई, दोस्त व गुरु जैसे 'प.पू. काकाजी' की जुदाई वह सहन नहीं कर पाये। असल में भगवत्स्वरूप प.पू. काकाजी के शरीर छोड़ते ही पू. कांतिकाका की आत्मा तो उनके साथ ही चली गई थी, केवल देह बाकी थी और आठ महीने बाद वे दिव्य आनन्द के चिदाकाश में समा गये.....ऐसा लगता है कि जैसे अक्षरधाम में बैठे प.पू. काकाजी भी अपने इस प्यारे मित्र के बिना रह नहीं पाये होंगे। जिस-जिस ने भी पू. कांतिकाका को नजदीक से देखा है, वह प्रत्येक

व्यक्ति दावे से कह सकता है कि कभी उनके मुख से निराशाभरी, उदासीनता में डूबी बात नहीं सुनी होगी। हमेशा प्रगट प्रभु मिलने की अखंड मस्ती में रहकर बलभरी सौम्यवाणी.....एकदम स्पष्ट वक्ता...किंचित् भी बनावट नहीं....ऊपर से देखने में थोड़े कड़े परन्तु अन्दर से भक्ति भरे मोम जैसे हृदय से निरंतर बहता निखालिस प्रेम, ममता, सेवा का अस्खलित छोछ !

गर्भ से ही अपनी माँ पू. सोनाबा से खूब उच्च संस्कार पाये थे। गुरुहरि शास्त्रीजी महाराज की सेवा करते-करते, स्वरूपों के लाड़-प्यार में स्नान करते-करते बड़े हुए। ब्र.स्व. शास्त्रीजी महाराज की पारखी दृष्टि ने भी कोहिनूर हीरे को पहचान कर इस पूरे परिवार को अपना निजी कुटुंब माना और अंत तक अपना हकदावा रखा। पू. कांतिकाका ने भी ब्र.स्व. शास्त्रीजी महाराज द्वारा दिए गये एक ही वचन कि–'तुम व दादुभाई (प.पू. काकाजी) भाई-भाई होकर रहना' को ब्रह्मसूत्र मान लिया। गुणातीत समाज की नींव की ईंट बनने में सच्चा आनन्द माना। एक आदर्शरूप जीवन जीकर उन्होंने साबित कर दिया कि सच्चे प्रेम की अभिव्यक्ति शब्द, व्यक्ति, पदार्थ, मन, इन्द्रियाँ, अन्तःकरण से ऊपर उठकर अपने अस्तित्व का विलीन करके याहोम होने में है। कितने भी विपरीत प्रसंगों में उन्होंने स्वप्न में भी इस वचन के प्रति की वफादारी, स्वरूपों के प्रति की निष्ठा व प.पू. काकाजी के साथ का मैत्रीभाव टूटने नहीं दिया। मन, बुद्धि को चाहे जँचा या न जँचा, पर तब भी वे सम्पूर्णतया अभिप्राय में खो गये। हरेक प्रसंग पर स्वयं ढाल बने....गुरुहरि योगीजी महाराज ने पू. कांतिकाका की दोनों बहनों पू. ज्योतिबेन व पू. ताराबेन को भगवान भजने की आज्ञा देकर बहनों के लिए आध्यात्मिक उन्नति का द्वार खोला। अनहद् विरोध हुआ; तब भी तीर्थधाम ताड़देव सोनावाला बिल्डिंग से साधना मंदिर की शुरुआत हुई। ताड़देव का सारा परिवार गुणातीत समाज की आधार शिला बना, जिसके फलस्वरूप आज गुणातीत बाग अपने पूर्ण विकसित स्वरूप में देश-विदेशों में अपनी सुगंध फैला रहा है। पू. कांतिकाका ने स्त्री-पुत्र, कुटुंब, कीर्ति सत्ता, अहंकार, प्रकृति, स्वभाव कुछ भी अपने रास्ते बाधक न बनने दी। सब कुछ 'कृष्णापर्ण...!' अपने को जँचने वाले भक्तों की ही माहात्म्ययुक्त सेवा नहीं ....विरोधी की भी गुरुहरि योगीजी महाराज व प.पू. काकाजी की ओर ही सतत् निगाह रखकर महिमा से सेवा करी। कई बार तोड़देव में अधिक भक्तों के अचानक आ जाने से पू. कांतिकाका के लिये खाना भी नहीं बचता, जबकि ताड़देव का सारा खर्च तो वह ही देते थे। फिर भी कभी भावफेर नहीं किया। फरियाद, अपेक्षा, उपेक्षा, रोष से परे निरपेक्ष, आत्मीयता और दासत्व भक्ति का मूर्तिमान स्वरूप था। ऐसी निष्ठा और कठिन परिस्थितियों में भी पल-पल विश्वास पकड़ रखने वाले भक्त का स्थान अगर स्वरूपों के दिल में हो तो उसमें क्या आश्चर्य? कैसी ईर्ष्या? जैसा जिसका समर्पण वैसा ही प्रभु की ओर से निरंतर आने वाले अक्षरधाम के सुख, शांति, आनन्द का अनुभव ! पत्नी पू. ललिताबा ने भी पति के चरणकदमों पर ही पीछे-पीछे आकर प्रभु के चरणों में अपना सर्वस्व सौंप दिया। अपने बच्चों को सस्ता टोन मिल्क पिलाया और संबंध वाले भक्तों की सेवा में सब न्यौछावर किया। अपने दो लड़के साधु होने दिये। अपनी तीनों लड़कियां भी भगवान भजने के रास्ते प्रभु के चरणों में समर्पित कर दी। प.पू. काकाजी

की आज्ञा से छोटे लड़के घनश्याम का विवाह खूब संस्कारी सौ. इला से किया। वह भी आज इस गुणातीत समाज की सेवा में लगे हैं।

अब दिल अपने आप से ही पूछता है....संतों, युवकों, बहनो को आईसक्रीम खिलाकर लाड़-लड़ाने वाले अपने 'प्यारे दादा' को कहां ढूंढे? गृहस्थ होते हुए भी त्यागी से अधिक सफल जीवन जीकर वह अमर हो गये। जिस प्रकार स्वामिनारायण संप्रदाय के इतिहास में महाराज के समय दादाखाचर का नाम वचनामृत के पन्ने-पन्ने पर है, उसी प्रकार पू. कांतिकाका का नाम गुणातीत समाज में कायम रहेगा। प.पू. पप्पाजी के शब्दों में ''प.पू. काकाजी निर्दोष बुद्धि के सम्राट थे तो पू. कांतिकाका समझदारी का सम्राट.....विवेक का स्वरूप था।''

पू. कांतिकाका का रिक्त स्थान शायद ही कोई पूरा कर पाये, पर हम सब की ओर से एक दर्द जो उन्हें था कि हम सब सर्वदेशियतायुक्त, आध्यात्मिक विवेक भरा जीवन जीयें....जो आत्मबुद्धि–प्रीति का विकसित रूप देखना चाहते थे–जो उन्होंने अपना जीवन जीकर साकार की थी अब उन्हें खोने के बाद तो करने हम दृढ़ संकल्प हों और पू. कांतिकाका जैसी शूरवीरता, सरलता, विवेक, आध्यात्मिकता की चरम सीमा पर पहुँच कर अद्‌भुत जीवन से हम प्रेरणा लें और अक्षरधाम में बैठे अपने प्यारे प्रभु प.पू. काकाजी को अब तो 'हाश' कर दें–यही प्रार्थना–यही 'समझदारी के सम्राट' को हमारी श्रद्धांजलि.....

☆ ☆ ☆

.....और श्रीजी महाराज ने कहा–

....यह जीव जैसी संगत में रहता है वैसा ही उसका अन्तःकरण हो जाता है। इसलिये जब यह जीव विषयी जीवों की सभा में बैठा हो और उस जगह सुन्दर सात मंजिल की हवेली में सुन्दर शीशे लगे हुए हों और सुन्दर बिछौने बिछे हुए हों, नाना प्रकार के आभूषणों तथा वस्त्रों से सुसज्जित होकर विषयीजन बैठे हों और परस्पर एक दूसरे को शराब का जाम पिला रहे हों, शराब से कितनी बोतलें भरी पड़ी हों, वेश्याएं पाजेबें बांधकर थेई-थेई कर रही हों और नाना प्रकार के बाजे बज रहे हों, तब ऐसी महफिल में जो पुरुष जाकर बैठे तो उस समय उनका अन्तःकरण भी दूसरी प्रकार का हो जाया करता है। और घासफूस की झोपड़ी हो, उसमें फटी हुई गुदड़ी वाले परमहंसों की सभा हो रही हो, वहाँ धर्म, ज्ञान, वैराग्य और भक्ति की भगवत्कथा होती हो और उस समय जो पुरुष वहाँ जाकर बैठें तब उसका अन्तःकरण और तरह का हो जाता है।

इसलिये, सत्संग और कुसंग के कारण जैसा अन्तःकरण हो जाता है उस पर यदि विचार किया जाये तो समझ आती है। किन्तु गोबरगणेश (मूर्ख) को तो उसका बिल्कुल ख्याल नहीं पड़ता। इसलिये यह कथा मूर्खतापूर्ण तथा पशुतापूर्वक आचरण करने वाले व्यक्तियों की समझ में तो नहीं आये। किन्तु जो विवेकी और भगवान का किंचित आश्रित हो, उसे तो यह वार्ता तुरन्त समझ में आ जाती है। इसलिए परमहंसों, सांख्ययोगी तथा कर्मयोगी हरिभक्तों को कुपात्र मनुष्यों की संगति नहीं करनी

चाहिये। सत्संग में आने से पहले चाहे जैसा भी कुपात्र जीव हो, उस जीव को नियमों का पालन कराकर सत्संग में ले लेना, लेकिन सत्संग में आने के बाद यदि कोई पुरुष या स्त्री कुपात्रता रखता हो तो उसे सत्संग से बाहर निकाल देना चाहये। यदि उसे नहीं निकाला गया तो ज्यादा खराबी हो सकती है। जैसे उँगली को साँप ने काटा हो या 'किडीयारी' रोग हुआ हो, यदि उस उँगली को तुरन्त काट दिया जाये तो वह पुरुष कुशल रहता है, पर यदि उस अंग का लोभ किया जाये तो ज्यादा बिगाड़ हो जाता है। उसी प्रकार जो जीव कुपात्र जान पड़े उसका तत्काल त्याग कर देना और यह जो हमारा वचन है उसका सब अवश्य परिपालन करना। यदि ऐसा किया गया तो हम समझेंगे कि आपने हमारी सर्व प्रकार से सेवा की है। हम भी आप सभी को आशीर्वाद देंगे तथा आप सब पर बहुत प्रसन्न होंगे। क्योंकि आपने हमारे परिश्रम को सफल बनाया है। फिर हम सब मिलकर भगवान के धाम में साथ रहेंगे। पर, यदि आप सब इस प्रकार नहीं रहोगे तो आपके और हमारे बीच की दूरी बढ़ जायेगी तथा भूत या ब्रह्मराक्षस की देह मिलने पर आपको परेशान होना पड़ेगा और आपने भगवान की भक्ति जो करी होगी उसका फल तो घूमते-भटकते कभी भी मिल जायेगा। पर, तब भी, हमने जो बात कही है उसके अनुसार यदि आपने आचरण किया तब ही मुक्त होकर आप भगवान के धाम में जायेंगे।

—क्रमशः

गढ़डा प्रथम प्रकरण-18
बुधवार, 7 दिसं. 1819

☆ ☆ ☆

स्वामी की बातें

71. एक ही काम करते-करते जीव थक जाता है। इसलिये बदल-बदल कर करना। वह क्या? तो कथावार्ता सुननी, पढ़नी, ध्यान करना, नाम रटन करना। इनमें से एक में जब थकावट लगे तब दूसरा करना। वरना घुटन होगी और मन तो जीव को उलझन में ही रखे ऐसा है। **प्र-2,20**

72. संत की महिमा कही कि—ऐसे साधु के दर्शन से भगवान के दर्शन का फल प्राप्त होता है व इनकी सेवा करने से भगवान की सेवा का फल प्राप्त होता है और ऐसे साधु से हमारी प्रीति हुई है, अतः हमारे पुण्य की तो कोई सीमा ही नहीं है। **प्र-2,21**

73. बड़े संत की आज्ञा से कार्य करना वह तो गणेशजी ने गाय की प्रदक्षिणा करी वैसा है और मनमानी करना वह कार्तिक स्वामी ने पृथ्वी की प्रदक्षिणा की वैसा है। अतः आज्ञा से थोड़ा भी करे वह बहुत है और मनमाना कितना ही करें पर वह अल्प ही हैं। हाँ, जिस आज्ञा में धर्म का ह्रास होता हो उसमें तो जैसा योग्य हो वैसा करना। **प्र-2,26**

74. भीतर में भजन करना सीखना। इससे विषय के राग (आसक्ति) कम होते हैं। **प्र-2,30**

75. निरंतर सभी क्रियाएं करते हुए भीतर में सोचना कि मुझे भगवान भजने हैं और मैं यह क्या कर रहा हूँ? ऐसा ख्याल हमेशा रखना। **प्र-2,35**

76. मुमुक्षु को तो हमेशा कोई सतर्क रखने वाला चाहिये। ऐसा हो तो भगवान भज पाते हैं। वरन्, अहाते से जैसे बाघ बकरे को उठा ले जाता है वैसा होगा। **प्र-2,37**

77. सामगम करे की पद्धति बताई–
सर्वप्रथम किसी एकान्तिक साधु के साथ प्रीति से जी को जोड़ देना। वह एकान्तिक संत तो भगवान में ही रहते होंगे, अतः भगवान के गुण उसमें होंगे। वह साधु के गुण समागम करने वाले में आयेंगे। पर जो यदि ठीक से जोड़ा नही होगा तो गुण आयेंगे नहीं। यह आज करो या हजार जन्म के बाद करो किन्तु यह किये बिना चारा नहीं है। **प्र-2,41**

78. साधु की बातों की गति तो काल (समय) जैसी है, वह दिखाई नहीं देती, पर अज्ञान टाल देती है; जैसे बालक में से जवान हो और फिर वृद्ध होता है पर दिखता नहीं और दूसरी जगह जो काम एक कल्प में होता है उतना काम यहाँ एक दिन में होता है और यदि अक्षर के मुक्त को भी कोई कसर रह गई हो तो उसे भी यहाँ कसर टालने भगवान के साथ आना पड़ता है। इसलिये जिसे कसर टालनी हो उसके लिये तो यहाँ के बराबर और कोई अच्छा जोग नहीं है। **प्र-2,45**

79. अपने से थोड़ा हो सके तो थोड़ा करना और नमस्कार करना। किन्तु छल कपट नहीं करना, इधर-उधर नहीं हो जाना। बड़े संत के पास जीव यदि सरल रहे तो संत सहज ही संभाल रखते हैं इस बारे कोई सन्देह नहीं है और जगत में भी तो यही रीति है कि जो जिसका होकर रहेगा उसकी फिकर उसे करनी पड़ती है। इसी प्रकार बड़े संत भी खबर रखते हैं। **प्र-2,50**

80. बीमारी आवे उसमें जो कायर हो जाये उससे दुःख तो मिटता नहीं है। उसमें जो हिम्मत रखे वह महाराज को जँचता था। **प्र-2,52**

☆ ☆ ☆

व्रतोत्सवसूची

1.	दि. 26.1.87	सोमवार	भागवत् एकादशी, ब्र.स्व. स्वामि श्री योगीजी महाराज का अक्षरधाम निवास
2.	दि. 28.1.87	बुधवार	शिवरात्रि
3.	दि. 3.2.87	मंगलवार	वसंत पंचमी, शिक्षापत्री जयंती, ब्र.स्व. स्वामिश्री शास्त्री जीमहाराज की जन्मजयंती, ब्र.स्व.प.पू. काकाजी महाराज का साक्षात्कार दिन
4.	दि. 7.2.87	शनिवार	नौमी, श्री हरिजयंती
5.	दि. 9.2.87	सोमवार	एकादशी, व्रत
6.	दि. 24.2.87	मंगलवार	विजया एकादशी, व्रत

PUBLISHED By SADHU MUKUNDJIVANDAS FOR YOGI DIVINE SOCIETY,
A 103, Ashokvihar-III, Delhi-110 052. India, Tel. 7128838
Printed at R.P.,Printers, Shahdara, Delhi-110 032